भारतीय संविधान में नीति निर्देशक तत्वों की प्रासंगिकता

डॉ. ओमप्रकाश सोलंकी

एस.बी.के.राजकीय महाविद्यालय,
जैसलमेर (राज.)

सांविधानिक दृष्टि से भारतीय लोकतन्त्र की सफलता और असफलता का अनुमान नीति निर्देशक तत्वों की सफलता से लगाया जा सकता है। जिसके अन्तर्गत यह देखना की क्या भारत के सत्तारूढ़ अभिजन ने संविधान निर्माताओं द्वारा प्रदत्त सामाजिक आर्थिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए अपेक्षित नीतियों का निर्माण किया है अथवा नही? और यदि किया है तो वह किस सीमा तक सफल रही है, क्योकि ब्रिटिश शासन से हमने राजनीतिक स्वतंत्रता तो प्राप्त कर ली थी, परन्तु सामाजिक व आर्थिक क्रान्ति की यात्रा प्रारम्भ करना शेष था। स्वतंत्रता के पश्चात भारत के शासक अभिजन वर्ग ने सामान्य व्यक्ति के लिए रोजगार उपलब्ध कराने के लिए क्या व्यवस्था की है? सदियों से पीड़ित शोषित वर्ग को संविधान निर्माताओं की आशा के अनुरूप क्या हम न्याय दिला पाये है। इन प्रश्नों से हम नीति निर्देशक सिद्धान्तों का आंकलन कर सकते हैं? लेकिन जहां तक निर्दशक सिद्धान्तों के रूपान्तरण का प्रश्न है सरकार द्वारा इस क्षेत्र में कारगर कदम उठाये गये है। भूमि सुधार अधिनियम, हिन्दू कोड़ बिल, सम्पति के मौलिक अधिकार, अस्पृशयता उन्मूलन, अनिवार्य व निःशुल्क शिक्षा प्रदान करना, बंधुवा मजदूरी, बालश्रम उन्मूलन कानून बनाना आदि–आदि। इसका तात्पर्य है कि सरकार संविधान निर्माताओं के सपने को साकार करने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील है। इस कार्य को साकार करने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील है। किन्तु इस यथार्थ से भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि आजादी के 72 वर्ष पूर्ण होने के पश्चात भी अब तक हम इच्छित लक्ष्य को प्राप्त करने में असमर्थ रहे है।

डॉ. अम्बेडकर ने संविधान निर्मात्री सभा में नीति निर्देशक तत्वों में अर्न्तनिहित उद्देश्यों को स्पष्ट करते हुए बताया "हमारा संविधान संसदीय प्रजातन्त्र की स्थापना करता है।" संसदीय प्रजातन्त्र से तात्पर्य है– एक व्यक्ति एक वोट। हमारा यह भी तात्पर्य है कि प्रत्येक सरकार अपने प्रतिवेदन के कार्य कलापों में एक विषय के अन्त में जबकि मतदाताओं निर्वाचक मण्डल को सरकार द्वारा किये गये कार्यों को मूल्यांकन करने का अवसर मिलता है, कसौटी पर कसी जायेगी। राजनीतिक लोकतन्त्र की स्थापना का उद्देश्य यह है कि हम कुछ निश्चित लोगों को अवसर न दे की वे निरंकुशवाद को कायम रख सके। जब हमने राजनीतिक लोकतन्त्र की स्थापना की है तो हमारी यह भी इच्छा है कि हम आर्थिक लोकतन्त्र का आदर्श स्थापित करे।

प्रश्न यह है कि क्या हमारे पास कोई ऐसा निश्चित तरीका है जिसमें हम आर्थिक लोकतन्त्र की स्थापना कर सकते है? विविध ऐसे तरीके है जिसमें लोगों का विश्वास है कि आर्थिक लोकतन्त्र लाया जा सकता है। संविधान के इस भाग की रचना में हमारे वस्तुतः दो उद्देश्य है–

1. राजनीतिक लोकतन्त्र का रूप निर्धारित करना।
2. यह स्थापित करना की हमारे आदर्श आर्थिक लोकतन्त्र है।

और इसका भी विधान करना की प्रत्येक सरकार जो कोई भी सत्ता में हो आर्थिक लोकतन्त्र लाने का प्रयास करेगी। नीति निर्देशक तत्वों की प्रकृति अपरिवर्तनीय है अर्थात् भाग 4 में दिए गए उपबन्धों पर किसी न्यायालय द्वारा बाध्यता नहीं दि जा सकती है। किन्तु यह संवैधानिक आदर्श कोरे उपदेश नहीं है अपितु निश्चयात्मक आदेश एवं संविधान के मानवाधिकार सम्बन्धी उपबन्धों के अभिन्न अंग माने जाते हैं। अनुच्छेद 37 घोषणा करता है कि निर्देशक तत्व देश के शासन के मूलाधार है। और निश्चित ही विधि बनाने में इन सिद्धान्तों को लागू करना राज्य का कर्तव्य होगा।

डॉ. अम्बेड़कर ने स्पष्ट किया निर्देशक तत्वों का आशय यह नही है कि वे केवल पूजनीय घोषणा बनकर रह जाये। यह अनुदेशों के दस्तावेज है जो भी सत्ता में आयेगा उसे इनका आदर करना होगा।

इस प्रकार नीति निर्देशक तत्वों का मुख्य उद्देश्य एक कल्याणकारी राज्य की स्थापना करना है जिसके अन्तर्गत समाज सभी वर्गों को सामाजिक न्याय की प्राप्ती हो सके। देश के शासन में आधारभूत यह सिद्धान्त हमारी कार्यपालिका और विधायिका के लिए एक निर्देश है कि उन्हें किस प्रकार जनता के हितों को देखते हुए शासन का संचालन करना है, संविधान की प्रस्तावना में निहित लोकतन्त्रात्मक गणराज्य के लक्ष्यों को प्राप्त करना है। भाग 4 के नीति निर्देशक तत्वों में जिन आर्थिक एवं सामाजिक लक्ष्यों को निर्धारित किया गया है उसके पालन करने का प्रयास राज्य को करना है।

समय–समय पर निर्देशक सिद्धान्तों के प्रति आलोचना भी व्यक्त की जाती रही। यह आलोचना संविधान निर्माण के समय से ही प्रस्तु त की गई थी कि ये सिद्धान्त किसी संगतपूर्ण दर्शन पर आधारित नहीं है, तथा यह अस्पष्ट है। इनमें क्रमबद्धता का अभाव और एक बात को बार–बार दोहराया गया है। प्रो. श्री निवासन के शब्दों मे इस अध्याय में कुछ बेढ़ंगे तरीक से पुरातन के साथ तर्क तथा विज्ञान द्वारा सुझाए उपबन्धों को विरूद्ध रूप से भावुकता पर आधारित उपबन्धों के साथ मिला दिया गया है।

वास्तव में एक प्रमुख सम्पन्न राज्य में इस प्रकार के सिद्धान्तों को ग्रहण करना कठिन कार्य है। यह नियम है कि एक उच्च सत्ता अधिनस्थ को आदेश दे सकती है, किन्तु एक प्रभुत्व सम्पन्न राज्य को इस प्रकार के आदेश देने की आवश्यकता पड़े यह अस्वभाविक सा जान पड़ता है। निर्देशक सिद्धान्तों की व्यावहारिकता को लेकर भी आलोचकों के द्वारा प्रश्न लगाये जाते है, उदाहरण के लिए मद्य निषेध के प्रश्न को लेकर अर्थशास्त्रियों के द्वारा आलोचना की गई है उनका कहना है यह सुधार राष्ट्रीय कोष पर भारी पड़ेगे तथा इससे सरकार के द्वारा किये जाने वाले जनकल्याण प्रभावित होगें। इसके अतिरिक्त यह भी कहा जाता है कि नैतिकता किसी पर थोपी नहीं जा सकती। मद्य निषेध कार्यक्रम शराबियों को नैतिक प्राणी बनाने की अपेक्षा अवैध शराब के व्यवसाय को जन्म देगा। यह व्यवस्था इस दृष्टि से भी अव्यवहारिक है कि कई राज्य सरकारों के द्वारा मद्य निषेध व्यवस्था का अन्त कर दी गयी ऐसी स्थिति में डॉ. जेनिंग्ज के शब्द उचित प्रतीत होते है कि आने वाली सदी में यह तत्व निःसन्देह निरर्थक हो जायेगें। किन्तु यह आशंका निमूर्ल सिद्ध हुई क्यांकि निर्देशक सिद्धान्तो को संविधान का अंग बनाने का उद्देश्य कल्याणकारी राज्य का निर्माण करना है। सामूहिक रूप से यह सिद्धान्त भारत में आर्थिक एवं सामाजिक लोकतन्त्र की रचना करते हैं। संविधान की प्रस्तावना में जिन आदर्शो के प्रति सम्पूर्ण व्यक्त किया गया है यह उन आदर्शों की प्राप्ति के लिए मार्ग प्रदान करते हैं। भारतीय गणतन्त्र की अन्तिम सत्ता जनता में निवास करती है तथा भारतीय जनता ने ही संविधान को अंगीकृत किया है। प्रस्तावना का सार बिन्दु यह है कि "हम भारतीय लोग भारत के संविधान को अंगीकृत करते हैं। संविधान के किसी भी प्रावधान में यह पृथक से नहीं कहा गया है कि शासन कि समूची शक्ति या जनता को प्राप्त हुई है। अतः प्रस्तावना द्वारा प्रभुसत्ता के अधिवास की समस्या का विवाद समाप्त कर दिया गया है इससे यह स्पष्ट हो गया है। संविधान किसी बाह्य सत्ता ने आरोपित नहीं किया है और हम सब भारतीय है। डॉ. अम्बेडकर के अनुसार प्रस्तावना स्पष्ट कर देती है कि इस संविधान का आधार जनता है एवं इसमें निहित प्राधिकार और प्रभुसत्ता सब जनता ने ही बनाया है और स्वीकृत किया है।

भारतीय संविधान के जनकों ने नवनिर्माण की भूमिका में एक नये और सुव्यवस्थित राज्य की कल्पना की थी। और यह बड़े ही संतोष का विषय है कि हमारे संविधान को निर्माता भी उन आदर्शों का पालन अपने जीवन में करते थे। जिनके द्वारा व्यक्ति की प्रतिष्ठा का अक्षुण्ण रखते हुए भी सामाजिक उत्थान और सामाजिक न्याय की स्थापना सम्भव होती है। भारतीय संविधान के सफलता का मुख्य कारण उसकी उद्देशिका का व्यापक परिप्रेक्ष्य उदारवादी दर्शन तथा लचीला स्वरूप है डा. सुभाष कश्यप के अनुसार प्रस्तावना में निहित पावन आदर्श हमारे राष्ट्रीय आदर्श है और जहां वे एक और हमे अपने गौरवमय अतीत से जोड़ते हैं वहा उस भविष्य की आशंका को भी संजोते हैं।

नीति निर्दशक तत्वों का उद्देश्य आर्थिक सामाजिक न्याय की स्थापना है तथा भारत में एक ऐसे समाज के निर्माण के लिए आधारभूत ढांचा बनाना है।

यह सच है कि संविधान के प्रारूप में गांधीवादी सिद्धान्तों को कोई स्थान नहीं दिया गया था, किन्तु इसके अभाव की पूर्ति ग्राम पंचायत, कुटीर उद्योग, नशाबन्दी, कृर्षिपालन को प्रोत्साहन आदि की व्यवस्था नीति निर्देशक सिद्धान्तों में सम्मिलित करते हुए की है। नीति निर्देशक सिद्धान्तों को संविधान मे स्थान देकर संविधान निर्माताओं ने जनता को सामाजिक एवं आर्थिक अधिकारो को मान्यता प्रदान की है और इस प्रकार उन्होंने समाजवादी आदर्शों मे

अपनी आस्था व्यक्त की लेकिन वस्तुतः समाजवादी आदर्शों की अपेक्षा उदारवादी आदर्शों की प्रबलता थी। और इसी कारण नीति निर्देशक सिद्धान्तों को अवादयोग्य स्थिति प्रदान की गई है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Constituent Assembly Debates 7, pp. 494-95
2. मंगलानी रूपा, भारतीय शासन एवं राजनीति, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर , 2011 पृ. 150
3. काश्यप सुभा, हमारा संविधान, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, पृ.113
4. Srinivasan, N., Oemocratic Govt. in India, World Press, Calcutta p. 182
5. Jenings SIrlyor, Some Characteristics of Indian Constitution, Oxford University, Press 1954, p. 31
6. काश्यप सुभा, संविधान की आत्मा, प्रस्तावना, लोकतन्त्र समीक्षा , पृ.125
7. जैन पुखराज एवं फडिया, बी.एल., भारतीय शासन एवं राजनीति, साहित्य भवन, आगरा 2012, पृ.63